# जंगली गधा यानी रन का बेपरवाह बादशाह घोड़खुर

**डॉ. चन्द्रशीला गुप्ता**

हमारे देश का सबसे बड़ा अभयारण्य कच्छ का रन है। यह गुजरात के सुरेन्द्रनगर ज़िले की पाटड़ी तहसील के खरघोड़ा गांव से शुरू होकर पाकिस्तान के सिंध राज्य की सीमा तक 4954 वर्ग कि.मी. क्षेत्र में फैला है। इसे सन् 1973 में अभयारण्य घोषित किया गया था। इसमें लूणी नदी बहती है। मानसून के मौसम में इसका मैदानी रेगिस्तान (समुद्र तल से 15 मीटर ऊंचा खारी मिट्टी का क्षेत्र) समुद्री पानी से भर जाता है। गुजरात सरकार के वन विभाग द्वारा की गई गिनती में यहां नीलगाय, चिंकारा, भेड़िया, लोमड़ी, गीदड़, जंगली व रेगिस्तानी बिल्ली तथा हायना थे। सर्दियों में सारस व फ्लेमिंगो समेत पक्षियों की 300 प्रजातियां देखी जा सकती हैं।

इसके दो महत्वपूर्ण भाग ग्रेटर रन व लिटिल रन हैं। ग्रेटर रन से लिटिल रन ज़्यादा दूर नहीं है, यहां भी मृत खारी भूमि है जहां बरसात में एक-दो फीट पानी भरा रहता है, जो थोड़ा समुद्री ज्वार से व थोड़ा स्थानीय छोटी नदियों से आता है। नवम्बर से जून तक के सूखे महीनों में जब पानी नहीं रहता है तब यहां आराम से जीप में बैठकर घूमा जा सकता है। लिटिल रन के अनेक भागों में नमक की खेती की जाती है। इसके लिए गड्ढे बनाए जाते हैं, जिनमें समुद्री पानी भर जाता है और गर्मियों में सूखकर नमक बन जाता है। बरसात में लिटिल रन में इधर-उधर छोटे द्वीप भी बन जाते है जो सूखे दिनों में छोटी-छोटी पहाड़ियों से नज़र आते हैं, इन पर घास, पेड़-पौधे व रेगिस्तानी वनस्पतियां उग आती हैं। इन पर व मुख्य भूमि के किनारों पर जंगली गधे (स्थानीय भाषा में घोड़खुर) चरते नज़र आते हैं।

घोड़खुर एक ऐसा दुर्लभ प्राणी है जो वर्तमान में लिटिल रन के सिवाय कही और नहीं पाया जाता है। कभी ये उत्तर-पूर्वी भारत, पश्चिमी पाकिस्तान व दक्षिणी फारस में बहुतायात से नज़र आते थे। अनेक प्राणी वैज्ञानिक घोड़खुर को ही असली जंगली गधा मानते हैं। तिब्बत के कियांग के बारे में कुछ खास ज्ञात नहीं है, सीरिया के जंगली गधे अब विलुप्त हो चुके हैं व उत्तरी अफ्रीका एवं मिस्र के जंगली गधे मूलतः जंगली न होकर घरेलू प्राणी थे जो जंगली जीवन में लौट गए।

यही वजह है कि भारतीय घोड़खुर को इतना महत्वपूर्ण माना गया है। ये बहुत खूबसूरत और हमारे घरेलू गधों (करीबन 37 इंच ऊंचे) से ज़्यादा ऊंचे (करीब 48 इंच) होते हैं। घरेलू गधे मिस्र के गधों के वंशज माने जाते हैं। घोड़खुर गधों या खच्चर से भिन्न हैं। इनकी पीठ के सुनहरे, सीधे बाल गर्दन से होते हुए सिर तक फैले होते हैं जो पीछे की ओर एक काली पट्टी के रूप में पूंछ तक जाते हैं। इनकी त्वचा पीले सुनहरे रंग की होती है जो नीचे लगभग सफेद-सी हो जाती है।

घोड़खुर की ताकत बेजोड़ है। इसी तरह इनकी गति भी अनुपम है। ये ज़ेब्रा व गधों के कुल के हैं और इनका वैज्ञानिक नाम *एक्वस हेमियोनस खुर* है। ये 30-40 सदस्यों के झुण्ड में रहते हैं, जिसमें एक अगुआ होता है। ये उसी का अनुसरण करते हुए दौड़ते हैं। प्रणय काल में मादा को पाने के लिए नर भयंकर लड़ाई करते हैं जिसके दौरान ये अपने पिछले पैरों पर खड़े होकर अगली टांगों से ज़बरदस्त दुलत्ती मारते हैं।

इनका औसत वज़न 230 किलोग्राम होता है। ये चारे व स्वच्छ जल के लिए इधर-उधर दौड़ते दिखाई देते हैं। घोड़खुर की औसत उम्र 20-25 वर्ष होती है। घोड़खुर 45 डिग्री सेल्सियस तक का तापमान बर्दाश्त कर लेते हैं। इनकी कोशिकाएं निर्जलीकरण सह लेने में सक्षम है जो रेगिस्तान के गर्म वातावरण के लिए श्रेष्ठ अनुकूलन है।

इस संकटग्रस्त प्रजाति का एकमात्र आवास लिटिल रन भी अब उतना सुरक्षित नहीं रहा। नमक की खेती के चलते अब मानवीय व वाहनीय व्यवधान बढ़ गए हैं। दुर्भाग्यवश अब मलधारियों (गुजरात की एक पशुपालक जाति) के

मवेशी इन्हें यहां से भी धकेल रहे हैं। घोड़खुर अब ज़्यादातर किनारों पर ही रहते हैं। यहां की झाड़ीनुमा वनस्पतियां इनको छुपने में मदद करती हैं और इनकी सूखी फलियां इनका भोजन भी हैं। वैसे ये घास, समुद्री झाड़ियों के पत्ते, यहां तक कि आक की सूखी पत्तियां तक खा लेते हैं।

घोड़खुर केवल सुरक्षा या एकान्त के लिए ही दौड़ते हैं। ये खतरा सूंघते ही मीलों भागकर नज़र से ओझल हो जाते हैं। अन्यथा ये सुबह से लेकर शाम तक एक ही जगह खड़े नज़र आ सकते हैं। ये भोजन की भी परवाह नहीं करते। इसलिए स्थानीय लोग इन्हें 'रन का बेपरवाह बादशाह' कहते हैं।

दिन में ये किनारों पर चरते हैं लेकिन रात होते ही खेतों में घुस जाते हैं और कभी-कभी ये भगाए जाने के पूर्व ही चौकसी कर रहे किसान को काट लेते हैं। इनकी जबरदस्त दुलत्ती की वजह से सभी लोग इनसे भय खाते हैं। यदि पूरी ताकत से मारी जाए तो दुलत्ती से जीप जैसी मज़बूत गाड़ी में भी धसान बन जाती है।

1930 में इनकी संख्या हज़ारों में थी। 1960 में अफ्रीकन हार्स सिकनेस की वजह से कई घोड़खुर मारे गए।

कच्छ के स्थानीय लोग बड़े परंपरावादी हैं। ये शुद्ध शाकाहारी होते हैं और कभी इन्हें मारकर नहीं खाते। यहां तक कि ये लोग अपने खेतों पर टिड्डियों का आक्रमण होने पर उन्हें नष्ट नहीं करते, वरन भगाने में विश्वास रखते हैं। इसी तरह रात में घोड़खुरों के घुसने पर (चाहे नुकसान बड़े पैमाने पर हो रहा हो) ये उन्हें खदेड़ते हैं, कभी उन्हें मारते नहीं हैं। लेकिन नई पीढ़ी धीरे-धीरे इन मान्यताओं को छोड़ती जा रही है।

इस क्षेत्र में नमक की बढ़ती खेती व अन्य मानवीय क्रियाकलापों ने इनकी संख्या पर विपरीत प्रभाव डाला है। कम होती वन संपदा भी एक प्रमुख वजह है। घोड़खुर बेचारा निरीह प्राणी की तरह रन के किनारों पर भटकता रहता है। कच्छ में मौजूद विश्नोई समाज एकमात्र आस की किरण है। राजस्थान में जिस तरह खेजड़ी वृक्ष व कृष्ण मृगों के अस्तित्व का श्रेय विश्नोई समाज को जाता है उसी तरह यहां भी घोड़खुर की शेष बची संख्या विश्नोई समाज की बदौलत ही है। ***(स्रोत फीचर्स)***